कथा-कहानी मंच

शहीद

डॉ. टेकचन्द

जन्म एवं शिक्षा: 1975 दिल्ली दिल्ली विश्वविद्यालय के स्वामी श्रद्धानंद कॉलेज में 2005 से हिंदी शिक्षण

लेखन:

तीन कहानी संग्रह, एक लघु उपन्यास, एक उपन्यास प्रकाशित

सम्मान:

डॉक्टर अंबेडकर विशिष्ट सेवा हरियाणा दलित साहित्य अकादमी राजेन्द्र यादव हंस कथा सम्मान, समय संज्ञान त्रैमासिक पत्रिका के संपादन से जुड़ाव।

पता:

फ्लैट न. 58 बागबान अपार्टमेंट, जीएच-2, रोहिणी सेक्टर 28, दिल्ली 110042

जोधपुर! वीर बहादुरों की भूमि। धरती माता पर प्राण न्योछावर कर देने वाले रणवीरों की धरती।

"भंवर युद्धवीर सिंह जी राठौड़ शहीद हो गये! पूरे इलाके में यह खबर भतूलिये (बवंडर) की तरह फैल गई। भाम्भीवाड़ा से लेकर रजवाड़ा, बामनवाड़ा से जटवाड़ा तक विविधता उत्सर्ग बलिदान का भाव विस्तृत हो गया। जोश उत्साह साहस और गौरव का संचार सारे क्षेत्र में करंट की तरह फैल गया। राजपूताने में इस मृत्यु का उत्सव मनाया जा रहा है।

"कुंवर सा! धरती को लाल ध रती की गोदी में चलो गयो! इसमें आपको शोक नहीं मनावणों चहिए! धरती के सपूत का मान-सम्मान होणा चाहिए..."

"कुंवर सा! थारा दादा परदादा नै मुसलमानां का साथ युद्ध करयो थो! वो परंपरा, वो विरासत थारा वीर बहादुर नै कायम राखी, उनको नाम सोना का अक्षरां मैं लिखा जाणा चाहिए..."

इस प्रकार त्याग बलिदान की लहर, शहादत का समुद्र ठाठें मारने लगा। अगले ही दिन इलाका पोस्टरों मुनादियों से भरा हुआ था। "वीर शहीद युद्धवीर सिंह जी राठौड़ की शहादत को कोटि-कोटि प्रणाम!

सारा इलाका क्षेत्रवासियों नैं खम्मा घणी! शहादत का इस पावन अवसर पर राजपूताना वीरभूमि पर विशाल आयोजन कियो जा रहयो है... सभी आम खास तै दरखास्त है और आदेश है रजवाड़ों की ओर सूं! पूरी संख्या मैं पहुंचकर धरती माता के वीर शहीद नै अपणी श्रद्धांजलि अर्पित करजो सो

डम डम डम डम डम डम डम

या पावन मौका पर परम आदरणीय सीएम साहब पधारेंगा... बड़ी संख्या मैं केन्द्रीय कैबिनेट मंत्री और देश भर का खास वीआईपी भी पधार रहया हैं साथ ही रजपूती सभा को भी आयोजन करयो जा रहयो है

डम डम डम डम डम डम...

और देखते ही देखते यहां की रेतीली भूमि युद्ध भूमि में तब्दील हो गई। पूरा क्षेत्र इन पोस्टरों, घोषणाओं और वीर रस के गीतों से ओतप्रोत हो गया।

चार गोली खाया शहीद देखते ही देखते चालीस गोलीयां प्रचारित हो

गया। टैंक की नाल से छप्पन इंच का सीना सटा दिया। टैंक का गोला भी दीवाली के पटाखे सा फुस्स हो गया। सांसें टूटते-टूटते भी कईयों को मार गिराया... आदि इत्यादि।

भाम्भीवाड़ा की कच्ची रेतीली गलियां खत्म होने के बाद थोड़ा ऊंचाई की तरफ चढ़ते हैं तो राजपूत रजवाड़ों की पक्की चौड़ी गलियां-सड़कें शुरू हो जाती हैं। सेठों की ऊंची हवादार हवेलियां और भी ऊंचे ऊंचे किले-परकोटे, मजबूत ऊंची दीवारें। भारी विशाल द्वार। ऐसी भव्यता कि देखकर तन मन में सिंहरन दौड़ जाए, पंजे उखड़कर जमीन छोड़ने लगे। पिंडलियों में कंपन होने लगे। ढाणी, वास, बस्ती, गांव, पट्टी, मथारा सब उमड़ पड़े।

इस धरती के ठाकुर नहीं साक्षात ईश्वरीय ठाकुरों के महल चौबारे। आज इन्हीं की साफ-सफाई कर चमका दिया गया था। जैसे धूल साफ होते ही तस्वीर एकदम साफ नजर आ जाती है। पुश्तैनी काम-धंधे छोड़ते जा रहे सभी कामगारों को सेवा में लगा दिया गया था।

"रै तीरथ भिश्तिया! पखाल (मशक) भर और सारा गलियारा नैं धो दे!"

"मालिक इब तो सारा काम धंधा छोड़ दिया हैं... बालक फैक्ट्री में लग गया हैं... तो उन नै पखाल गडाल (टांड) पै धरवा दी है!"

"गडाल पर धरवा दी है तो उतार गडाल पर तै ना तो कुंवर सां तेरी खाल उतरवा लेवेंगा...!

रै कौण सो तेरी मशक तै ही सफाई धुलाई होवैगी ? बस नेग शगुन सो कर दियो! रजवाड़ा नै दिखाई पड़णों चाहिए कि भिश्ती, भाम्भी, मोची, खाती, कुम्हार, नाई, धोबी वगैरहा सब और जितणां भी सेवादार हैं सब सेवा में हैं.... अब बता इस्टेट मुनीजर म्हारा पिताजी था ना ? पर यो रिवाज भी तो निभाणों है ना! तो घूम रहयो हूं इस्टेट मुनिजर बणों..."

बस सभी को आज परंपरागत काम धंधे मिले हुए थे। यूं काम तो मशीनों से भी हो सकते थे परंतु मशीन की गुलामी वह मालिकाना सुख वह सुकून कहां दे पाएगी जो अपना जर खरीद गुलाम अहम को संतुष्ट कर देता है। तो सभी को सेवा पर लगाया गया था।

"रै चमन माली ! पूरो रजवाड़ो सजणो चाहिए! सड़क और गलियां ढंक जावै! वीआईपी आवैंगा, वीआईपी का पांव धरती पै ना पड़ै फूलों पै ही रखा जावै! और फूलां तै महक जावै गलियां !"

"जी मालिक! फूल वाला तो इब मेरा कोंटैक्ट मैं ना रहया तो मंडी से फूल मंगवाणां पड़ेंगा कई मण फूल... अगर उनतै काम चल जावै तो.... बस फूलां की पेमेंट टाइम पै हो जावै...."

चमन माली ने बहुत डरते हुए फूलों की पेमेंट वाली बात दबे सुर में कही और तथाकथित मैनेजर ने उसे सुनकर भी अनसुना कर दिया।

अपार जनसमूह उमड़ पड़ रहा था। एक ओर तो राजपूत वीर की शहादत की गौरव- गाथा गाई सुनाई जा रही थी । दूसरी तरफ यह भी चर्चा थी...

"सुणा है चुनाव होण वाला हैं ये सारा तामझाम उसी खात्तर है... पर हम तो कुछ कह ना सकैं... छोटा मुंह बड़ी बात भाया!"

तो शहीद की शहादत और बलिदान का यह जो अभूतपूर्व जलसा हुआ सारा इलाका स्तब्ध रह गया। हाथियों की सवारी निकली, सेना का मधुर जोशीला बैंड बजा, महाराणा प्रताप तथा अमर सिंह राठौड़ और अन्य वीरों की परंपरा में भंवर युद्धवीर सिंह राठौड़ को शामिल किया गया। देसी राजे रजवाड़ों का जमावड़ा हुआ। शासन-प्रशासन का सारा अमला भी जुट गया। विदेशी भी जुटे। भव्यता दिव्यता का संगम। कलाकार वीर रस से सराबोर रासौ गा रहे थे।

सभी लोग अपने आपको धन्य मान रहे थे। अभिभूत थे। भव्य दृश्य था। मंत्री जी सीधे हेलीकॉप्टर से उतरे। हेलीकॉप्टर को देखने के लिये पूरे इलाके में भगदड़ सी मच गई। सुरक्षा घेरा ना होता तो लोग छू ही लेते उड़नखटोले को, खुड़कावाली चीलगाड़ी को। जहां आज भी हवाई जहाज को चीलगाड़ी कहते हैं तो हेलीकॉप्टर हुआ खुड़कावाली चीलगाड़ी।

ऊंची हवेलियों परकोटों से घिरे बहुत बड़े मैदान में जो रेगिस्तान का मरुद्यान था विशाल बाग बगीचा बन गया था। उसी के बीचों-बीच सीएम तथा अन्य मंत्रियों ने पूरे राजसी ठाठ-बाट, शान-शौकत से अमर शहीद भंवर युद्धवीर सिंह जी राठौड़ की विशाल प्रतिमा का अनावरण किया।

लोग हैरान थे। दस पंद्रह फुट ऊंचा चबूतरा फूलों की लड़ियों से ढंका हुआ था। उसके ऊपर भगवा

पर्दा तना हुआ था। उसकी बगल में अस्थाई सीढ़ियां बनाई गई थीं। साथ ही मंच। जब उस पर चढ़कर मंत्री जी व अन्य गणमान्य व्यक्तियों ने एक डोर खींची तो जय जयकारे गूंज उठे।

अमर शहीद भंवर युद्धवीर सिंह जी राठौड़ की मकराना के भूरे भक्क दूध से सफेद मार्बल की मूर्ति प्रकट हुई। भंवर युद्धवीर सिंह जी राठौड़ वह भी चेतक घोड़े पर सवार। घोड़े का पत्थर भी मोती सा सफेद। साक्षात अमर सिंह राठौड़ सां।

"जणूं मूरत ना है भंवर सा बोल पड़ेगा..."

"एकदम सचली मूरत! ऐसी जीवती मूरत जणूं चाल पड़ेंगा भंवर सा घोड़ा नै ऐड़ दे कै..."

ढोल नगाड़ों की ढम-ढम-ढम के साथ देर तक हवाई फायर किए जाते रहे।

हालांकि किलों के दोनों तरफ तोपें भी सजी-धरी थीं मगर वे अब सजावटी ही रह गई थीं। उम्मीद नहीं कि उनके भीतर के कलपुर्जे भी उनमें मौजूद हों। बस सिंहरन पैदा कर सकने वाला डीलडोल बाकी था। हवाई फायरों ने ही आसमान और इलाका गुंजा दिया। जयकारों के बीच ही मंत्री जी ने अपना भाषण भी दाग दिया। ऐसा माहौल बन गया कि लोग स्वयं ही देश के लिए मर मिटने को तत्पर हो गए....

"अमर शहीद भंवर युद्धवीर सिंह जी राठौड़ को नमन करूं हूं! और आप सबनैं खम्मा घणी! वीरां की इस धरती पै वीरां की खात्तर, राजपूत वीरां की शान बान मरजादा खात्तर कहो भी गयो है कि...

"बारहां बरस लौ कूकर जीवै...
तेरहां जीवै सियार...
बरस अट्ठारह छतरी जीवै
आग्गै जीवण तै धिक्कार"

जनता अर्थ नहीं जानती थी मगर तुकबंदी पर फिदा थी। जयकारे गूंज उठे। लोग अभिभूत और विस्मित थे।

और विस्मित थे बहादुर के पिता अमराराम, जो मश्कें भीगते बहादुर को साथ लेकर आए थे। फूलों के रंगों से सारा क्षेत्र सज महक रहा था। बहादुर के पिता अमराराम ने इन रंगों को इस सज धज को मन में बसा लिया था। इसी दिव्य भव्य गौरव को उन्होंने अपने जीवन का अंतिम उद्देश्य बना लिया था।

"बहाद्दर की मां! सैंकड़ा साल का दलिद्दर उमर भर जीवण तै चोखो ऐसी मौत मरै के घर-खानदान माणस जूण पा ज्या..."

ज्वार-बाजरे की मोटी रोटी को लाल मिर्च की चटनी से खाता और छाछ घूंटता बहादुर उत्साह से भरा लग रहा था। कि वह निमित्त बन जाए परिवार को जिवा देने का।

संभवत इसी सपने को सच करने के लिए बड़ी बहादुरी से दुस्साहस के साथ पिता ने नाम रखा बहादुर। रजवाड़े में इस बात का पूरा ख्याल रखा जाता था कि भाम्भीवाड़ा में किसी के नाम में सिंह ना लगे। ऐसा कोई भी नाम ना रखा जाए जिसके कारण वीरता धीरता गर्व गौरव की ध्वनि ना आए। इनके नाम से कोई राजपूत वीर कलंकित ना हो। पिता के मन में भी कहीं ना कहीं वह सपना जगमगा रहा था। बुझा नहीं था फौजी बनने का सपना जो उसने बेटे में बहादुर नाम के साथ ही रोंप दिया था। तीन भाइयों एक बहन के बाद सबसे छोटा था बहादुर। बहादुर नाम पर राजपूताने में कोई बहुत ज्यादा हलचल नहीं हुई थी।

"भाद्दर! यो ठीक है मरा... बहादुर तो नेपाली चौकीदार हुआ करै हैं"

कुंवर सा ने कहा। कुंवर सा उसे भी अमरा या अमराराम नहीं कहते थे। अमरा राम में से वीर राजपूत अमर सिंह राठौड़ के नाम की सी गंध आती थी। इसलिए अमराराम के अ को खाकर कुंवर सा उसे "मरा" कहते थे।

उसमें ध्वनि पहले ऊंम... की सी निकलती फिर "मरा" शब्द प्रस्फुटित होता। यूं अमराराम इस भेद को समझ रहा था।

सारे परिवार ने जोर लगाया तो बहादुर बी.ए. तक पहुंच ही गया। चाहते ना चाहते बारहवीं तक आते-आते उसका ब्याह कर दिया गया और बी.ए. पास होते होते एक बेटी भी हो गई। बहादुर ने किताबें पढ़ कर बीए किया था। किताबी ज्ञान किताबों तक ही सीमित रहा। गांव में तो आज भी मान्यता ही सबसे बड़ा ज्ञान माना जाता है।

"मौजड़ी चाहे सोना की हो पहनी तो पांव मैं ही जावेगी सिर पै तो ना धर ली जावेगी ?

ये सब नीच कमीण दो आखर पढ़ गया हैं इसको यो मतबल तो कोनी के अपणा आसण पै बिठा लेवां!"

बेटी का आगमन शुभ रहा। बहादुर फौज में भर्ती हो गया। घर में खुशियों

की बरसात हो गई। जोधपुर के सूखे इलाके में जहां दूर-दूर तक पानी का कतरा भी नहीं था वहां बेटे ने आंखें छलका दीं।

"हमनै तो कदी सोची भी ना थी कि बेटा का साथ इस रेगिस्तान तै बाहर जावेंगा पर बेटा नै दुनिया दिखा दी... दुनिया की सौगात लाकर यहां धर दी..."

"जुग जुग जीवे म्हारो लाल..." बहादुर की मां वाकई खुश थी। वह हर रोज उसे आशीष देती। उसके भेजे तेल, साबुन, शैंपू से पोती को नहलाती तेल लगाती। जो यहां ध नवान लोगों को भी नहीं मिलता था। यहां के अन्य लोगों के मुकाबले किस्तूरी का परिवार खुशबू मारता था। यह खुशबू जल्दी ही रजवाड़ों तक पहुंच गई।

महकने दहकने चहकने का जन्मसिद्ध अधिकार तो बस कुंवर सां, भंवर सा को ही था। बातें होने लगीं-

"रै बीसल सां थम कांये का चुहाण-रजपूत ? वो दलिद्दर-शूद्दर को थारा बताया सास्त्रां नियमां नै तोड़ण लग रहयो है....? और साथ में शास्त्र ज्ञान भी दे दिया जाता।.. ढोल गंवार शूद्र.."

बीसल भी अपनी बेबसी लाचारी जता देता-

"फौज में है ना काका... और गौरमिन्ट भी इनकी ही सुणै है... ईब वो राजपाट ना रहया कि जंईयां मरजी हुकुम दे देवै था... कोई ना मैं तो ताक मैं हूं.. कोई मौको मिलै तो रगड़ दूं साला नै...."

अब बहादुर के पिता को भी घर पड़ोस मोहल्ले में सम्मान मिल रहा था। पत्थर की खाणियों की जलाऊ झिलाऊ दिहाड़ी बेगारी छोड़कर उसने छोटी सी दुकान कर ली थी। दुकान क्या घर के बाहरी कोठरी जो कुछ समय पहले ही पक्की की थी, उसमें रोजमर्रा की जरूरत की चीजें भर ली थीं। बहादुर पिछली बार छुट्टी आया तो साइकिल छुड़वा कर एक लूना मोपेड ला दी थी-

"बापू जी ईब थम सैकल घसीट कै पेट मैं नलां मत करवाओ! लूना चलाओ"

आश्चर्य मिश्रित खुशी से पिता ने कहा-

"लूणां? हम कईया लूणा चलावै? सैकल पर जावती बार तो उतरणों पड़ै है बार-बार... उनकी हवेलियां कै सामने से गुजरती बार... फिर लूणा तो कच्चा रास्ता तै ना जा सकै है...? सैकल नै तो ऊपर उठा लो... पर लूणां...? और ऊपर तै छोरी हो री है यां का ब्याह खात्तर भी सोचणों पड़ेगो....!"

पिता की खुशी पर शंकाएं, डर रिवाज हावी थे। पीढ़ियों का दर्द उनके स्वर में था।

बहादुर की बिरादरी तो उस पर गर्व करने लगी थी लेकिन राजपूताना में उसे लेकर बहुत अच्छा माहौल नहीं था।

"ठाकुर साहब गया वो बखत! के सुथरा लत्ता और मौजड़ी आपका तन पै ही सजै-धजै करै था... अब तो ढेड़ कमीण भी धरती पै पांव ना टेकता... अब तो ढेड-कमीण भी फौज मैं जा के पवित्तर हथियारां नै झू ले है... इस अशराम का बहादुर मैं बहुत घमंड है..."

"हूं.... कुछ तो करणों पड़ेगो.."

"कुछ करो कुंवर सां ना तो वो कहावत है ना के... इनतै बात जब करें जब हाथ मैं जूत्तो होये..."

बहादुर को काबू करना सारे रजवाड़े के लिए मुश्किल होता जा रहा था। कितनी ही बार तो वह फौज की पूरी वर्दी और बंदूकधारी साथी फौजियों के साथ घर पर होकर गया है। जब कभी भी जैसलमेर बॉर्डर पर या आसपास कहीं उसकी तैनाती होती फौज की गाड़ी में वह खड़े-खड़े ही सही एक आध घंटे के लिए भी आ धमकता। उस समय पूरे भाम्भीवाड़ा में भगदड़ सी मच जाती और हलचल रजवाड़े तक पहुंच जाती।

देखते ही देखते उसका परिवार एकदम तरक्की कर गया। फौज की खुराक पाकर बहादुर गबरू जवान हो गया। तो तनख्वाह पाकर मां-बाप में आत्मविश्वास का संचार हुआ। भाई भी आजू बाजू के खाली पड़े प्लॉट में घर बना कर इज्जत से रहने लगे। बहादुर की पत्नी का बनाव श्रृंगार घर बिरादरी की अन्य औरतों से बेहतर हो गया था। कुंई पर पानी लेने जाती-आती तो गली भर की औरतें उसकी संगत चाहतीं। और हंसी ठिठोली करती, "कांय री कोयलिया अब तो तू भी फौज में जावेगी?"

"ना जीजी ऐसो तो नाय है..."

"नाय री हमनै सुणीं ईब कै देवर जी थान्नैं ले कर जावेंगा... और थारा सास सुसरा भी तो जाण की कह रिया बतावैं..."

कोयलिया लजा जाती। खुश तो वह भी थी कि कश्मीर देखने को

मिलेगा।

दूसरी कहती, "हां घूम आ कोयलिया फेर तो बेटी चिंया को नाम लिखवाणों पड़ेगो इस्कूल मैं... फेर कैंयां निकलो जावै है...?"

सुख सौंदर्य में गुणात्मक वृद्धि कर देता है। सुखी मन की झलक चमकते तन और मन की उमंग में दिखाई देती है। पांव ऐसे उठता है जैसे रेगिस्तान और पहाड़ को लांघ जाएगा। कोयलिया भी खूब सुंदर हो चली थी। रंग-बिरंगे कमीज और घूंघट में भी उसका यौवन ठांठे मारता छलक पड़ता था।

बहादुर को एक साथ दो मोर्चों पर लड़ना पड़ रहा था। एक, तो सुंदर पत्नी प्यारी सी बेटी से दूर रहकर फौज में रहना। दूसरा मोर्चा जाति का, जो हर रोज जीतना पड़ता था। हवलदार होते हुए भी उसे वह सम्मान नहीं मिल पा रहा था। रंगरूट भी उसकी अवहेलना करते थे। अक्सर उसे साहब लोगों के बंगलों पर तैनात कर दिया जाता। रक्षा नहीं सेवा।

सेवा साहब की हो तो भी चल जाए। यहां तो साहब की हेकड़ी बाज घरवाली नकचढ़े बदतमीज बालक और बहुत बार घमंडी रिश्तेदारों की सेवा टहल। साहब के कुत्तों बिल्लियों को भी साहब वाला सम्मान देना। कोई भी उसे किसी भी तरह धमका सकता था। साहब लोगों के बंगलों से शिफ्ट होकर जब यूनिट बैरक पहुंचता तो उसका स्वागत रम करती। साथियों के बीच बैठ दो-चार घूंट मार कर वह मन की बात कहता।

"रम्म मिटा दे गम्म"

दूसरे फौजी साथ देते

"बोल बम बोल बम बोल बम"

हंसी मजाक के बीच सभी पी रहे होते। मगर बहादुर जैसे शराब नहीं खून के घूंट पी रहा होता। सब कुछ और बतला रहे होते मगर वह बड़बड़ा रहा होता, "नाम बहादर! रैंक हवलदार! तैनात बॉर्डर पर! काम! धरती मां की रक्षा करना! अच्छी बात!''

जय श्री राम!

भारत माता की जय!

का नारा लगाकर टूट पड़ो टारगेट पर। और टारगेट?

टारगेट अफसर का कुत्ता की टट्टी!

टारगेट अफसर की घरवाली की जूती-चप्पल

टारगेट अफसर का बालकां का कच्छा बनियान!

उसकी बात बीच में काटकर उसी के जिले का एक साथी कहता, "रै बहादुर साब कांय अंट शंट बके जा रहया हो? रै थमने कच्छा बनियान छूणैं को मौको तो मिल गयो... यो आरक्षण ना होतो तो गाम का बाहर जोहड़ कीचड़ मैं पड़या रहो था... डांगरां मैं डांगर अर जिनावरां मैं जिनावर... अब दो रोटी सुख तै मिल गई तो बातां करैं..."

"...बात क्यों ना करैं ठाकर...? मैंने टेस्ट पास करयो.. बराबर ट्रेनिंग ली... बराबर सारी ड्यूटी करी...! क्यूं ना करूं ठाकर...?

नशे में दूसरा भी उबल पड़ता

"..शट अप यू इडियट ..!"

"...थारे से सीनियर हूं मैं..! रैंक को ख्याल रख, ना ता फ्रंटरूल लगवा दूंगा... एक जिला को है तो क्या फौज का रूल फॉरगेटिंग यू इडियट!"

"..जी स्साब ..!"

कह कर ढीला-ढाला बहादुर सेल्यूट मारता पर हिलता भी रहता। उसका शरीर झूम रहा होता। पर दिमाग में यह सारी पॉलिटिक्स टक्करें मार रही होती। फिर वह मक्खन लगाने वाली मुद्रा में पूछता-

"स्साब मे आई गो टू बाथरूम.. प्लीज परमिट स्साब...?"

"...यस यू कैन गो... बट रिटर्न इमीडेटली...!"

"..ज्जी स्साब!"

कहकर बहादुर उठकर लड़खड़ाता था बैरक से बाहर आ जाता। बाहर के अंधेरे में जहां दूर-दूर तक छावनी थी ।

बहादुर की तरह अन्य साथी पेड़ की आड़ तलाश रहे होते। अंधेरी रात में पेड़ों से बतियाता बहादुर गालियां उच्चार रहा होता-

"..साला बणैं हैं ठाकर... बहणच्यो... मादर... जात.. बणैं हैं अफसर की पूंछ... म्हारा पुरखां चूस मारा... इब म्हारा हाड़ खून खा रहया हैं... यहां देस सेवा मैं आया हैं या इनकी लुगाईयां का जूत्ता-लत्ता धोण खात्तर...?

वह पेशाब कर रहा था और जैसे पेशाब में ही इन अफसरों की जाति के घमंड को बहा देना चाह रहा था।

"..गांम मैं इनकी सुणों... इनकी चाकरी करो... और मिहनत करकै नौकरी मैं आ जाओ तो यहां बी इनकी ठकुराई सहो... अपणां मां-बाप और बालकां की बीमारी पै भी छुट्टी ना मिलै अर इनके कुत्ता बिल्ली की टट्टी का रंग और वजन भी

बताओ... लिखकै राखो... इनके बालकां का कपड़ा धोओ... प्रेस करो... जूत्ता पालिस करो... कहां की आजाद्दी...? साला वो ही सिस्टम है सबका सब... गाम मैं ये सिर पै तो फौज की नौकरी मैं भी वो ही हिसाब... साला... मादरजात..!"

और केवल बहादुर ही नहीं पूरी छावनी की बैरकों के पिछवाड़े घने अंधेरे में इसी प्रकार धाराप्रवाह गालियां मूती जा रही थीं। छावनी का विस्तार हो रहा था। छावनी देश होती जा रही थी। देश छावनी होता जा रहा था।

इधर बहादुर के गर्वित रोबीले होते पिता में भी बदलाव आ रहा था। पहले जहां किसी भी ऊंच जात को देख कर वह ठिठक कर, "खम्मा घणीं ठाकुर सां" कहता हुआ धनुष सा मुड़ जाया करता था "जय हो भंवर सा!" कहता हुआ चलती साइकिल से कूद ही जाया करता था, चोटिल भी हो जाता था। मगर हवलदार बनने के बाद बहादुर ने घर पक्का करवा दिया था लूना ले कर दे दी थी, तब से उनकी रीढ़ भी सीधी होकर तनने लगी थी।

ठुड्डी अब ठंडी माथा हुई जा रही थी। चलती लूना से कोई आस दिख जाता या एकदम सामने आ जाता तो लूना को धीमा कर रोक लेत, उसका टायर चेक करने लगता। लूना की ओट से ही बोलता-

"खम्मा घणी भंवर सा!"

और बिना पूछे बता भी देता। "छोरा नै दिलवा दी यो लूणां पर आजकाल तंग बहोत कर री है..." और झूठे होंठों मुस्कुरा देता।

इस पर कभी-कभी उसकी घरवाली कहती-

"थैं आजकाल इन ठाकर बाम्हणां को लिहाज नईं करता... सुरसतिया बता री थी कि थम खम्मा घणी करो तो तण कै आकड़ मैं करो... ठकुरानी उसतै बता री थी..."

"...बहादर की मां जमाना बदल रहयो है... ईब वो बखत ना है, सिरकार है, कानून है, वोट है... ईब तो सुणवाई है म्हारी भी..."

घरवाली उनको लगातार समझाती रहती मगर वह बात काटते रहते-

"...बहोत बदलाव आयो है... ईब तू ही देख ले के बणा-बणी मंदिर का चबूतरां पै दरवज्जा पै ठाक्कर भगवान की शरण मैं पहली रात बितावै हैं..."

"हां! यो तो रिवाज है म्हारा... पीढ़ियां तै चली आवै है यो रसम तो..."

"हां! बूढ़ा थोड़ा सही स्थान देखकर अपनी बात भी मिला देता।

"हां तो यो जो ठाक्कर भगवान है ना...? वो पहलां ये मूंछां-पग्गड-धारी ठाकुर राजपूत कुंवर सा ही होया करै था... बणी नै पहली रात वहीं, उनका साथ बिताणी होवै थी .... और रात बिताण को मतलब तो पतो ही होयेगो थान्नैं...?

"ओं?"

"ओं ना! हों" बहादुर का पिता बताता।

"..पुराणां पुरखा का बखत मैं कौण नीच शूदरां नै नया कपड़ा पहरण देवै था...? कौण ताजा सुच्चो खाणों खावण देवै थो?

"फेर मतलब..?

"मतलब यो बावलियां के पहरण खात्तर ऊंच जात वालां की फटी पुराणीं उतरन और खाण खात्तर उनका बासा जूठा... ईब ठाक्कर बाम्हण किस तरियां नयो पहरण खाण अर बरतण देवै था...? तो फेर बनी किस तरियां अणछुई लेवण देंगा? तो पहली रात ठाकुर बामण बरत लिया करैं था। फिर म्हानैं उनकी उतरण जूठण मिलै करै थी..."

"ओं अच्छो..."

"हां इसी मारे तो जमाना बदला कानून बणा तो पर रीत ना टूटी... आज भी पहली रात बना-बनी पहलड़ी रात ठाक्कर... छत्तरधारी कुंवर सां भंवर सा ना मंदिर का ठाकुर मंदिर का चबूतरा पै सोवै..."

बहादुर की मां को अब समझ आया कि शादी वाली रात वह लोग मंदिर के अहाते में रात भर दरी पर क्यों रहे। सारे कुटुंब जन भी वहीं रहे। वह हैरान थी।

बूढ़ा बोला-

"इसी मारी सहज सहज ये रीत रिवाज खत्म हो जावैं तो ठीक... ईब म्हारी बणीं बस मंदिर मैं धोक मारण ज्यावै करेगी... अर मैं भी बस नाम चारा की खम्मा घणीं करूं हूं... सहज-सहज सब छोड़ देवेंगा...

यूं ही दिन खुशी खुशी बीत रहे थे, एक अच्छे भविष्य की उम्मीद में बहादुर ने घर भर की रंगत बदल दी

थी। उसके कुनबे के लड़कों में भी आत्मविश्वास का संचार हो रहा था। पिता भी नई नई उमंग से भरते जा रहे थे। कोयलिया और मधुर और मीठी और सुहानी होती जा रही थी। निखर रही थी संवर रही थी। उसके रूप सौंदर्य में दिनों दिन समृद्धि होती जा रही थी। घर पड़ोस कोयलिया को बहुत मान से निहार रहा था। कोयलिया की बेटी उसी के जैसी चहकती महकती घर गली के कच्चे पक्के में किलकारियां गुंजा रही थी। मां बेटी जैसे रेगिस्तान में मीठे पानी की झील और बाग बगीचे ले आई हों।

लेकिन.... लेकिन जीवन की तो अपनी ही चाल है, जैसे जीवन की अपनी गति है। तब फौज में भी वीरता है वीरगति है। बहादुर कहां अछूता रहता। जीवन की चाल और गति से बहादुर वीरगति को प्राप्त हुआ। मीडिया देश समाज के लिये गर्व-गौरव उत्सर्ग भरी खबर, मगर बहादुर का परिवार अर्श से फर्श पर आ गया। शानदार स्वादिष्ट पकवानों भरी थाली में गर्म जलती रेत का बवंडर आन गिरा। कोयलिया का तो जीवन उजड़ गया। मां बाप का मान सम्मान भी मुट्ठी से रेत की तरह फिसल गया।

"अमराराम का लड़का बहादुर शहीद हुआ"

खबर से गांव भर ओत-प्रोत हो गया। खूब रोने कल्पने के बाद दो ही दिन में बहादुर सामान समेत घर पहुंचा। पैरों पर नहीं कंधों पर। चमचमाती महंगी लकड़ी के बने ताबूत को तिरंगे से कवर किया हुआ था। रोते बिलखते मां-बाप। बेसुध बेहोश बावली सी कोयलिया। कल तक जो उमंगता विकसता प्रफुल्लित उल्लास भरा जीवन था आज दीन हीन भिखारिन सी जैसे कूड़े कचरे के ढेर पर पड़ी मृत्यु की याचना कर रही हो। घर आंगन लोगों से भरा हुआ था।

शाम तक बहादुर का अंतिम संस्कार कर दिया गया। फौज से आठ दस फौजी आए जो फौज के ट्रक में सामान लाए थे। घर परिवार के लोग कुछ रिश्तेदार जात बिरादरी और कुछ गांव वाले। "शहीद बहादुर अमर रहे! जय हो आदि के नारे लगे। आठ दिन की तेरहवीं कर दी गई। "आजकाल कौण तेरहां सत्तरां दिन दरी बिछा कै बैठै हैं...? बहादुर का लुटा-पिटा सा पिता अपने दूसरे बेटों और भाईयों को समझा रहा था।

"..सबका अपणां-अपणां काम धंधा हैं... इतणा टैम बखत कहां रह गया किसी धौरै!"

"ठीक कहवै भाई ईबकै टैलीफोन करो थो के बापू इस बार आयो तो या लूणां को इंजण बंधवाऊंगो... के पतो थो के अपणों दाणों पाणीं ही उठ जावैगो..!"

कहकर बूढ़ा फफक कर रो पड़ा। कोयलिया बार-बार बेहोश हो जाती थी। इसी जज्बाती माहौल में तय किया गया।

"भाई बिरादरी ध्यान तै सुणों!" तेरहवीं पर बिरादरी के एक बूढ़े ने सबको संबोधित करते हुए कहा-

"बहादुर नै जो तक देस समाज बिरादरी खात्तर जान दी तो हमनै भी उसको कर्ज चुकाणों चहिए.."

सब हैरानी से देख सुन रहे थे-

"तो क्यूं ना यो करैं के शहीद बहादर की एक मूरत तो इस गांम मैं लगा देवैं...!"

सुनकर पिता की आंखें भर आई। मां और पत्नी की हालत तो एक सी ही थी। आपस में थोड़ा-थोड़ा पैसा इकट्ठा हुआ और कुछ दिनों बाद जयपुर से पत्थर की ढाई तीन एक फुट की मूर्ति आ गई। अब लगाने का संकट खड़ा हुआ। रजवाड़ा पूरा नाराज था। मगर नाराजगी एक सीमा तक और वह सीमा यह कि मूर्ति बहादुर के अपने प्लाट में लगाई गई। उस दिन फौज से केवल चार ही फौजी आए और उस मोहल्ले से भी कुल मिलाकर चालीस-पचास एक लोग जुटे। पांच एक फुट का चबूतरा और उस पर ढाई-तीन फुट की मूर्ति, पत्थर की मगर रंग भरी हुई। वर्दी पर हरा चेहरे पर क्रीम सा रंग। ढाई फुट का धड़।

कोयलिया नित्य प्रति बेटी के साथ रोज उसकी सफाई करके जाती। थोड़े ही दिनों में वहां एक बगीचे ने आकार ले लिया। बीस-तीस फुट का दायरा। पौधे पेड़ होने की उम्मीद में लगाए गए थे। मगर मूर्ति रजवाड़े के कलेजे की फांस बनी हुई थी। बहादुर के न रहने से परिवार के ठाठ नहीं रहे। मगर अब मूर्ति ?

"...ठाकुर सां जो माणस जूण मैं भी ना था उनकी मूर्ति लगेगी अब

..?

"रै परस्या राम सब इस निकम्मीं सिरकार की मेहरबानी है! जी मैं तो बहोत कुछ आवै पर के करैं ईबकै इस सिरकार में साझा ना है म्हारो..."

"पर हुकुम सुणीं है कि सिरकार पलटण वाली है..."

"बस परस्या राम जै सिरकार पलट गई नैं तो तू देखिये म्हारा वे ही राजा महाराजा वाला ठाठ-ठसक!"

"और हुजूर मालिक इस सेवक नैं मत भूलियो...!"

"बस परस्या तू तेल देख और तेल की धार देख!

और ऐसा बहुत जल्दी हो भी गया। वक्त बदला सरकार बदली। या कहें कि सरकार बदली और लोगों का वक्त बदल गया। ऊपर से नीचे तक सब बदल गया। बदल गई शब्दों की परिभाषा। देश समाज धर्म व देशभक्ति सब शब्दों की परिभाषा सत्ता और सत्ता समर्थित भीड़ करने लगी।

अब रजवाड़ों को जीवन दान देने वाली सरकार आ गई। जो धर्म के नाम पर बनी थी जो भविष्य के भारत का निर्माण अतीत का नाश करके कर रही थी। इतिहास और पुरातत्व की तमाम मान्यताओं, खोजों को पलट देने का दौर था।

"किसी की जेब में हमारा धन है कहकर उस को खंगाला जा सकता है। उसे नोचा जा सकता है। इस कुतर्क को सत्ता का समर्थन मिलते ही भीड़ को सपने आने लगे"

ढूंह टीलों के नीचे प्राचीन विलुप्त नदियां खोजने के लिए अरबों रुपए सरकार ने दे दिये। और अन्य धर्मों की इमारतों के नीचे मंदिर नजर आने लगे। एक्स-रे, अल्ट्रासाउंड से भी सटीक स्पष्ट रिपोर्ट आने लगी। किसी को सपना आया था किसी को गुरुओं ने पुरखों ने दर्शन देकर बताया था कि फलां मजार के समाधि के नीचे फलां वाले भगवान का मंदिर दबाया गया।

ऐसे ही एक दिन भक्तों की भीड़ जोरदार नारे लगाती इन इलाकों से गुजर रही थी। इस भीड़ ने बहुत सारे भौगोलिक बिंदु तय कर रखे थे। जहां ऐतिहासिक भवनों के नीचे बहुत ही नीचे देवी-देवताओं की मूर्तियां सांस ले रही थीं। आजादी की पुकार कर रही थीं। मंदिर दबे होने की आस्था वहीं थी। पाताल भेदी दृष्टि इनको वर्तमान सत्ता से प्राप्त थी। सीधे सोनार किरणें आ रही थीं। और प्राप्त था प्रचंड बहुमत प्रदत्त अभयदान। तो भारी भरकम जत्था मरुस्थल में बवंडर उठाता हवेली और कच्चे पक्के घरों को कंपाता दलकाता हुआ जा रहा था।

मंदिर वहीं बनाएंगे ..!
ढांचा वहीं गिराएंगे ..!
अरे जो हमसे टकराएगा..!
चूर चूर हो जाएगा ..!
सौगंध राम की खाते हैं ..ठोकर में खंडहर को धूल बनाते हैं...

भीड़ का जत्था हवेलियों और पक्के मकानों की सुंदर सड़कों से हटकर अचानक कच्ची बस्तियों की तरफ मुड़ गया। गांव के दक्षिण में बसी दलित बस्तियां रेत के गुबार से ढंक गई। हड़बड़ हड़बड़ खड़बड़ खड़बड़ कर कच्ची पक्की गलियां भीड़ से भर गईं।

"ये कौण ? ये कैंयां आया ?

कोयलिया अपनी सास से बोली। पास में बेटी भी खेल रही थी। पास ही घर कुनबे के दो-चार छप्पर आंगन थे। वहीं से पानी लेकर वह बहादुर की मूर्ति को नहला और बगीची को सींच देती थी। पौधे जवान हो रहे थे। बगीची बाग हुई जा रही थी। रेत ठंडा होने लगा था। सांझ की सीलक बढ़ रही थी। कोयलिया बहादुर की मूर्ति को नहलाकर धूप बत्ती दिखा चुकी थी। सास बगल के आंगन में एक वृद्धा से बतला रही थी। बच्चे भी वहीं खेल रही थी वह छोटे-छोटे पत्थरों का ढेर लगा रही थी। कोयलिया ने इस घर की वृद्धा को काम करने से मना कर दिया था।

"ना माउसी मैं करी दूं... थम रहवण दो..." और वह झाड़ू लेकर आंगन बुहारने लगी। झाड़ू लगाते हुए कह रही थी-

"पाणी गरम कर दियो है नहा ल्यो... फेर बालां कंघी कर द्यूंगी माउसी..."

इस घर की वृद्धा जो कोयलिया की मौसी लगती थी उसे झोली भर-भर कर आशीष दे रही थी। साथ ही कोयलिया की स्थिति पर उसकी सास से बात करते हुए रह-रहकर उसकी आंखें भर आ रह थीं। सामान्य दिन की सामान्य सी क्रियाएं। परंतु वातावरण एकदम आसामान्य होता चला गया।

बाहर बवंडर सा उठा। खूब शोर और ऐसी आवाजें जैसे सांझ ढले पशुओं का झुंड दिन भर बेचौन होकर घर खूंटे को लौट रहे थे। तेज आवाजें में थबड़-थबड़... दबड़-दबड़ और नारे

जय हो!

जय हो !

एक आध बार पंक्तियां भी गूंज जातीं.. बनाएंगे... इत्यादि

कोयलिया की बेटी बहादुर की मूर्ति के पास खेल रही थी। यहां जो क्यारियां बनी हुई थीं उनके रेत में से गोल-गोल पत्थर जो नींबू नारंगी जैसै आकार के थे झोली में भरकर-भरकर अंदर आंगन के नीम की जड़ों में जमा कर रही थी। पत्थर ले जाती बच्ची जोर जोर से चिल्लाई

"आई..." साथ ही तेज आवाज नारों जयकारों की भी सुनाई दी। कोयलिया उसकी सास और घर की वृद्धा तथा अन्य बच्चे दौड़कर आए आकर दरवाजे पर ठिठक गए। देखा भीड़ का एक रेला। पचास साठ की संख्या।

सभी ने रंग-बिरंगे कुर्ते पहन रखे थे। भगवा रंग इनमें सबसे ज्यादा था। बाकी मिलते-जुलते गहरे हल्के रंग। सबने नीचे पजामा जींस की पैंट पहन रखे थे। और ओम लिखा त्रिशूल छपा पटका माथे पर बंधा था। किसी ने पगड़ी बांध रखी थी किसी ने गमछा लपेट रखा था। सबके हाथों में ओम लिखे झंडे थे। इस परिवार के साथ अन्य परिवार भी अपने अपने दरवाजे पर आकर ठिठक गए। अब तक तेज भोंकते कुत्ते पीछे हटने लगे थे। कोई किसी गली में घुस लिया। कोई दूर रेत के टीले-टिबे की तरफ दौड़ गया और वहीं से भौंक रहा था। सारा जत्था आगे आया। तेज नारे लगने लगे।

"सौगंध राम की खाते हैं...!

सबने मूर्ति के चबूतरे को चारों ओर से घेर लिया। बगीची के सुंदर फूल पौधे उनके पैरों तले कुचले जा रहे थे... मसले जा रहे थे। यंत्र चालित ढंग से सबके हाथों में हरकत हुई। जैसे सेना की परेड में कुशल संचालन होता है। एक साथ हाथ और उसी गति से पैर उठते हैं ठीक एकदम वैसे ही झंडे बगल में दबाकर कुर्ते की जेब में हाथ गया तो किलो भर का हथोड़ा बरामद हुआ। फिर वैसी ही त्वरा से दूसरी जेब से बिलहांद भर का लकड़ी का बिट्टा निकाला हथौड़े में डाला जिसको जहां जो भी ईट-पत्थर मिला, आसपास के घरों की पथरीली दीवारें, गली में पड़े पत्थर उनपर मारकर लकड़ी के बिट्टे को फिट कर दिया। भीड़ ने सबसे आगे लीडर की तरफ देखा। आग भरी आंखों से वाणी में ओज भरकर लीडर चीखा-

"भारत माता की ..."

"जय !!" सब ने कहा आसपास के लोग सहम गए।

फिर कहा-"जय कारो वीर बजरंगी" "हर हर महादेव!!"

कहता हुआ हथोड़ाधारी जत्था बहादुर की मूर्ति व चबूतरे पर टूट पड़ा। तरह-तरह की आवाजें जैसे भारी कारखाना चल पड़ा हो। बहादुर की मां व कोयलिया रो उठीं। बढ़कर रोकना चाहा तो शक्तिशाली हथेलियों व कंधों कोहनियों ने उनको परे धकेल दिया। रोती बिलखती दोनों वहीं पर फिसलती-धिसलती पसर गई। आसपास के लोग भी जब तक समझ पाते तब तक तो वहां कुछ ही क्षणों में केवल पत्थरों का मलबा फैला हुआ था। पल भर की देरी में वहां ऐसा हाल हो गया जैसे किसी कॉलोनी में प्रशासन की जेसीबी मशीनों ने अवैध निर्माणों को मटियामेट कर दिया हो। अब वहां मलबे का ढूंह भर रह गया था।

"हर हर महादेव !

"भारत माता की जय..!"

के नारे गूंज रहे थे धूल का गुबार मलबे के ढेर पर उड़ रहा था। अब वे सब नाक की सीध में जो मस्जिद नजर आ रही थी उसकी दिशा में बढ़ गए। नए नारे के साथ-

"अयोध्या तो झाकी है

काशी-मथुरा बाकी है"

शोर दूर होता चला गया जैसे तूफान गुजर गया हो। सब शांत। कोयलिया की सिसकियां गूंज रही थीं और उसकी बेटी झोली में मूर्ति के टुकड़े भरकर भीतर की ओर जा रही थी। कोयलिया और उसकी सास को अन्य स्त्रियां संभाल रही थी। लोगों की आंखें नम थीं। टूटी मूर्ति की नाक को छू देखकर कोयलिया की बेटी हैरान थी। टूटी मूर्ति के टुकड़ों को डरी सहमी सी देख रही थी। वह पत्थर की नाक को अपनी नाक से छुआकर थोड़ा दूर हटाकर टुकुर-टुकुर निहार रही थी।